बोध क्रम ३८ प्रकाश क्रम ९

पर्व माला

लेखक

वीरेन्द्र गुप्तः

प्रकाशक

वेद संस्थान

मण्डी चौक, मुरादाबाद

सृष्टयाब्द १,९७,२८,१३,१००

मानव सृष्टि एवं वेदकाल १,९६,०८,५३,१००

दयानन्दाब्द १७७

विक्रम सम्वत् २०५६

दो हजार १९९९ई०

वेद संस्थान
की साहित्य सेवा

वेद संस्थान की स्थापना चैत्र शुक्ल प्रतिपदा सम्वत् २०४८ (रविवार १७ मार्च १९९१) को हुई।

वेद संस्थान का लक्ष्य है– सद्साहित्य अल्पमूल्य पर अथवा निःशुल्क आपके पास तक पहुँचता रहे। हमने अब तक १– विनयामृत सिन्धु, २– अभिनन्दनीय व्यक्तित्व, ३–विवेकशील बच्चे, ४– जन्म दिवस, ५– योग परिणति, ६–करवा चौथ, ७– दैनिक पंच महायज्ञ ८– गो धन प्रकाशित की हैं। इसी श्रृंखला में नवम पुष्प के रूप में श्री वीरेन्द्र गुप्तः द्वारा रचित कृति **पर्व माला** प्रस्तुत कर रहे हैं। इस प्रस्तुति का प्रयत्न वेद संस्थान का है तथा सहयोग है **श्रीमती गायत्री देवी पत्नी श्री प्रेम प्रकाश जी जलेसर वाले एवं आर॰ एण्ड पी॰ एक्सपोर्ट परिवार** का।

हमें आशा है कि आप **वेद संस्थान** को पूर्ण सहयोग देकर नूतन साहित्य प्रकाशित करने का अवसर अवश्य प्रदान करते रहेंगे।

अम्बरीष कुमार
सचिव
वेद संस्थान
मण्डी चौक, मुरादाबाद

भेंटकर्ता

आदर्श दम्पत्ति

श्री प्रेम प्रकाश जी एवं श्रीमती गायत्री देवी

आर० एण्ड पी० एक्सपोर्ट

।।ओ३म्।।

उच्च तिष्ठ महते सौभगाय।

अथर्ववेद २/६/२

महान् ऐश्वर्य के लिये उठो।

पर्व किसी भी पन्थ, समुदाय, मत और संस्कृति के दर्पण होते हैं। पर्व उस पन्थ व संस्कृति आदि की मानसिकता रहन-सहन, खान-पान, आपसी व्यवहार और व्यंजन कला के प्रदर्शक होते हैं। इन पर्वों से सारा दर्शन मुखरित होकर सामने आ जाता है। लगभग एक सहस्र वर्षों के अन्तराल में हमारी मातृभूमि वसुन्धरा में अनेक प्रकार के सम्प्रदायों ने प्रवेश कर पदाक्रान्त किया। उन सभी के भी कुछ न कुछ पर्व होते हैं। अपनी संस्कृति में अत्यधिक पर्व हैं। इसी कारण अपना देश संसार में पर्वों वाला देश कहा जाता है।

आज पर्वों में अधिकतर विकृति देखने में आती है। उसका एक कारण है। पहले तो हम कुछ समझना नहीं चाहते, न स्वाध्याय करते हैं और न मनन। दूसरे कोई हमें न कुछ बताता है और न ही कोई गलती को टोकता है। जो जिसके मन में आता है वह वैसा ही करता चला जाता है और वही गलती कुछ समय पश्चात् परम्परा बन जाती है। उस गलती को जानते हुए भी उसे परम्परा की ओट लेकर छोड़ना भी नहीं चाहते। कहते हैं कि यदि हमने कुछ बदल किया तो कहीं अनिष्ट न हो जाय।

परन्तु यह नहीं जानते अनिष्ट तो किसी न किसी कर्म का फल ही होता है, न कि किसी गलत परम्परा को छोड़कर उसके सही स्वरूप को मानने से।

परम्परायें कैसे पनपती हैं। उसकी कुछ घटनाओं का उल्लेख करते हैं। १- पुत्र के विवाह समय घर में पल रही बिल्ली मर गई। माँ ने सोचा कहीं कुछ वबन्डर न मच जाय इस लिये उसको वहीं पर ही टोकरी से ढक दिया, कोई उठाकर न देखने लगे इसलिये उसे एक लाल कपड़े से ढक दिया। विवाह का सब कार्य सम्पन्न हो जाने के पश्चात् उसने अपने पति से कहा इसे उठाकर बाहर डाल आओ। यह दृश्य नववधु देख रही थी। कालान्तर पश्चात् जब उसके पुत्र का विवाह समय आया तो उसने अपने पति से कहा कि आपके विवाह समय हमारी सासू जी ने मरी बिल्ली टोकरी के नीचे बन्द करके रखी थी और उस पर लाल कपड़ा पड़ा था जब विवाह का सारा कार्य पूर्ण हो गया तो उसे बाहर फिकवा दिया था। अब मेरे पुत्र का विवाह है, तो मरी बिल्ली लाकर टोकरी के नीचे बन्द करो। पता नहीं किस अनिष्ट से बचने के लिये उन्होंने ऐसा किया था, हमें भी वैसा ही करना चाहिए। यहीं से परम्परा बनने लगी।

कहा जाता है कि विवाह की परिक्रमायें जिसे फेरे भी कहते हैं उसे कन्या के माता-पिता न देखें। ऐसा क्यों? जबकि हमने देखा और पढ़ा है कि विदेह राजा जनक की कन्या सीता और उनके भाई की तीन कन्याओं के विवाह अवसर पर 'फेरों' के समय राजा जनक और उनके भाई दोनों पति-पत्नी सहित बैठे थे और उनके सामने परिक्रमायें हो रहीं थीं।

भारत में मुसलिम शासन काल में हिन्दू युवतियों का खुलेआम अपहरण हो जाता था, इसी कारण से छोटी आयु में और रात्रि के समय छिप कर विवाह होते थे। पुरोहित ने पिता

से पाणिग्रहण अर्थात् कन्यादान कराया और माता पिता से कहा कि आप बाहर द्वार पर जाकर बैठ जायें, कहीं कोई दुष्ट न आ जाय। दूसरे छोटी आयु में बच्चों का विवाह देखकर माता-पिता भावुक होकर रोने लगते थे। इस दृश्य को देख कर भी पुरोहित जी उनको वहाँ से हटा देते थे। बस यहीं से विवाह के समय माता-पिता 'फेरों' को न देखें, परम्परा बन गई। अब न अपहरण का भय है और न छोटी आयु की भावुकता का। अब माता-पिता 'फेरों' के समय सामने बैठ सकते हैं और बैठते भी हैं।

परमात्मा ने हमको बुद्धि दी हैं, हम उसका उपयोग क्यों नहीं करते? सत्य बात यही है कि "सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सदा उद्यत रहना चाहिये।" (महर्षि दयानन्द)

एक सन्त ने नारा दिया "चरणं शरणं आगच्छामि" मेरे चरणों की शरण में आओ, तो खूब धन मिलेगा। अन्ध भक्तों ने उस सन्त के चरणों का चित्र अपनी गोलकों पर लगाया। यह नहीं सोचा गोलक पर कहीं किसी के पैरों का चित्र लगाते हैं क्या? इसके विपरीत यदि गोलक पर उसके पोते, नाती आदि ने किसी गलती से पैर लगा दिया तो उसके कोमल, लालिमा युक्त गाल पर करारी चपत लगा दी। उस सन्त के दुराचार का भण्डाफोड़ हुआ, चारों ओर उसके पापाचार कर्म की चर्चा होने लगी तो भी उस पापी सन्त के चरणों का चित्र अपनी दुकान से जो अपने ही सर पर लगा रखा है हटाना नहीं चाहते, यह कैसा अन्ध विश्वास है। अच्छा या बुरा अपने कर्मों के फल से ही होगा। उस पैरों के चित्र को हटाने या लगाने से कुछ नहीं होगा। सोचो, विचारो और सत्य को स्वीकार कर उसका अनुसरण करो।

हमने इससे पूर्व 'करवा चौथ' पति पूजा पर्व पुस्तक को प्रकाशित किया था। यह पुस्तक एक परिवार में गई जहाँ पर उस परिवार की विवाहित पुत्री अपने पति से लड़कर घर चली आई

थी; उसने इस पुस्तक को पढ़ा; विवेक जागा; सत्य मार्ग का पता लगा अपने कर्त्तव्य को जाना और समझकर स्वयं ही अपने आप पति के घर चली गई और सुख का जीवन जीने लगी। हमने इस बार कुछ और पर्वों पर प्रकाश ड़ाला है। उसके वास्तविक स्वरूप को प्रस्तुत किया है। जिससे विवेकी पुरूष सत्य को ग्रहण कर सकें।

'करवा चौथ' पुस्तक से प्रभावित होकर श्री स्वरूप लाल आर्य (जीन्द), श्री राजेन्द्र प्रसाद आर्य फरीदाबाद और श्री कपिल कुमार जी (बिहार), उक्त महानुभावों ने अन्य पर्वों पर भी लिखने के लिये प्रार्थना की मैंने उन सभी की भावनाओं का आदर कर 'पर्व माला' के नाम से इस पुस्तक की रचना की है।

नाग पंचमी

हमारी संस्कृति में सभी जीव जन्तुओं की रक्षा के लिये प्रभु से प्रार्थना करते हैं। नाग भी जन्तुओं में अधिक विषधर जन्तु है। कहते हैं 'हाथी के पाँव में सबका पाँव' इसी प्रकार समस्त जन्तुओं में अत्यधिक विषधर होने के कारण नाग को सम्बोधित करके सभी जीव जन्तुओं की रक्षा के लिये उपाय करते हैं। जब हम अन्न पकाते हैं तो पहले अग्नि में बलिवैश्यदेव यज्ञ की १० आहुतियाँ दे के सबसे पहला फुलका गाय के लिये निकाल कर रख देते हैं और अन्तिम फुलका कुत्ते के लिये है। इस प्रकार हम सभी का हित चिन्तन करते हैं।

मातृवत्परदारांश्च परद्रव्याणि लोष्ठवत्।
आत्मवत्सर्व भूतानि या पश्यति स पश्यति।।

चाणक्य नीति १२/१३

जो दूसरों की स्त्रियों को माता के समान, दूसरे के धन को मिट्टी लोहे के समान और अपने समान सब प्राणियों को देखता है वही ठीक देखता है।

महामुनि चाणक्य ने इस सूत्र में चरित्र और धन की पवित्रता पर प्रकाश डाला है और उत्तरार्द्ध में अपने समान सब प्राणियों को समझने की बात कही है। एक दिन मैं विचार मग्न बैठा हुआ था अनायास चाणक्य का यह सूत्र याद आ गया। विचारों का मन्थन होने लगा। मन में प्रश्न उठा कि यहाँ पर (सर्व भूतानि) शब्द का प्रयोग क्यों हुआ है? 'भूत' का अर्थ व्यतीत हो जाने के है और 'सर्व' का अर्थ है सभी। पूरा अर्थ बना - सभी व्यतीत हुये। प्रश्न उठता है क्या व्यतीत हुए? सहसा मन में आया कि कहीं हमारे व्यतीत हुए जन्मों के बारे में तो नहीं कहा जा रहा है? मन मस्तिष्क में द्वन्द छिड़ गया, बहुत से विचार उठे, अनायास मन के एक कोने से ध्वनि उठी, हाँ यही ठीक है, कि हमने पूर्व के जन्मों में जिस-जिस बद्ध देह में रहकर कर्मों के फलों को भोगा है, उसी की ओर महामुनी चाणक्य का संकेत है, अर्थात् हमें मानव देह मिलने से पूर्व कही जाने वाली चौरासी लाख योनियों में घूम कर आना होता है। यहाँ यह बात और स्पष्ट कर देना आवश्यक है की सभी को चौरासी लाख योनियों में नहीं भटकना पड़ता, वह तो हमारे कर्म फलों के अनुसार न्यूनाधिक योनियों में घुम कर मनुष्य देह मिलती है। यह बात इससे स्पष्ट हो जाती है कि हमने भी कर्म फल के अनुसार इन सभी जीव जन्तुओं में कभी न कभी वास अवश्य ही किया है। 'सर्व भूतानि' इसी लिये हमें सभी प्रकार की योनियों के जीव-जन्तुओं का सदैव हित चिन्तन करते रहना चाहिये।

एक बार मन में एक और शंका उठी कि परमेश्वर ने सर्प, बिच्छू, कॉतर, छिपकली, आदि अनेक विषयुक्त जन्तुओं को

क्यों बनाया? जो मनुष्य जीवन को भयंकर संकट में ही नहीं, ड़ाल देते अपितु जीवन तक का हरण कर लेते हैं। इस विषय पर स्वाध्याय और मनन किया और परिणाम पर भी पहुँचा। प्रभु की इस सृष्टि में कोई भी वस्तु निरुद्देश्य नहीं है। यह विषाक्त जन्तु भूमि के अन्दर रहते हैं। भूमि में अनेक प्रकार के बिष बनते ही रहते हैं। मनुष्य जीवन उन विषों को सहन नहीं कर पाता, इस कारण प्रभु ने हम मनुष्यों को विष रहित भूमि प्रदान करने के लिये इन विषाक्त जन्तुओं को बना कर भूमि के सपूर्ण विष का पान करके भूमि को विष रहित बनाकर हम मानवों के रहने योग्य बनाते रहते हैं। यह जन्तु विष का पान करते ही रहते हैं इस लिये यह विषधर कहे जाते हैं। हम इनका रक्षण, सत्कार, पूजन इस लिये ही करते हैं कि यह जीवित रहकर हमारे लिये भूमि को विष रहित करते रहें और यह विषधर हमारे ऊपर क्रुद्ध होकर आक्रमणकारी न बने। जिस प्रकार तेजवान अग्नि हमें प्रकाश देती है, ताप देती है, क्या आप जानते हैं कि वह किसे उत्पन्न करती है? नहीं जानते। वह उत्पन्न करती है धूम को, कालिमा को। क्यों? क्योंकि वह तेजवान अग्नि अन्धकार का भक्षण करती है, इसी कारण कालिमा युक्त धूम को उत्पन्न करती है। इसी प्रकार यह विषधर जन्तु भूमि के विष का पान करके शुद्ध भूमि हमारे लिये तैयार करते हैं और विष को अपने में समाये रहते हैं।

पीपल के वृक्ष को भी 'नाग' अथवा 'नागमार' कहते हैं। वृक्षों में भी जीव होता है।प्रभु जी जिस जीवात्मा को दण्डित कर स्थावर योनि रूपी बन्दी गृह वृक्ष के योग्य समझते हैं तो उसे वहाँ पर भी भेज देते हैं। हमने भी कभी स्थावर योनि वृक्ष में वास किया होगा।

एक पक्षी का नाम चकोर है, वह 'आक' खाता है। उसे

राजप्रासाद में रखा जाता है, इसका विशेष उपयोग यह है कि जो भोजन राजा के लिये जाता है उसे इस चकोर पक्षी के सामने रखा जाता है। वह इसे देखता है। यदि भोजन के किसी पदार्थ में विष मिला है तो, उसे देख कर चकोर के नेत्र लाल हो जाते हैं। यदि भोजन शुद्ध, और विष रहित है तो चकोर प्रसन्न हो घूमता रहता है। चकोर पक्षी में यह विशेष गुण विद्यमान होने से हम मानवों के लिये कितना उपयोगी है।

पर्व और पद्धति

नाग पंचमी का पर्व श्रावण शुक्ल पंचमी को मनाया जाता है। इस दिन प्रायः दीवार पर अथवा कागज पर काली स्याही से सर्प (नाग) जैसी लकीरें बनाकर उसका पूजन करते हैं दूध के छींटे लगाते हैं। पूजा का यह प्रकार 'नाग पंचमी' के उद्देश्यों से कोसों दूर है। हम नाग पंचमी के महत्व पर विस्तार से विचार कर चुके हैं। इस प्रकाश में बैठकर सोचें कि इस पर्व को वास्तविक रूप में किस प्रकार मनाया जाय।

इस दिन प्रातःकाल उठकर शौच स्नानादि से निवृत होकर नित्य की भाँति (ब्रह्म यज्ञ) सन्ध्योपासनादि करके दैनिक यज्ञ करें। इस यज्ञ में इन दो मन्त्रों की विशेष आहुति दें।

ओं यः प्राणतो निमिषतो महत्वैक
इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै
देवाय हविषा विधेम।।

यजुर्वेद २३/३

जो प्राण वाले हम सब प्राणी मात्र और अप्राणिस्वरूप वृक्ष पौधे आदि जगत का अपनी अनन्त महिमा से एक ही राजा विराजमान है, जो इस मनुष्यादि और गौ आदि प्राणियों के शरीर की रचना करता है। हम लोग उस सुख स्वरूप सकलैश्वर्य के देने हारे परमात्मा की उपासना अर्थात् अपनी सकल सात्विक पुरूषार्थ युक्त पाप रहित उत्तम सामग्री को उसकी आज्ञा पालन में समर्पित करके विशेष भक्ति करें।

ओं अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्यशुष्मिणः।
प्रप्रदातांर तारिष ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे।।

यजुर्वेद ११/८३

सदैव बलकारी आरोग्य अन्न का सेवन करें और दूसरों को भी देवें। मनुष्य तथा पशुओं का सुख और बल बढ़ावें, जिससे ईश्वर की सृष्टि क्रमानुसार आचरण से सबके सुखों की सदा उन्नति होवे।

इसके पश्चात् (सर्प) नाग के लिये-दूध। गाय और कुत्तेके लिये-फुलका (रोटी)। पक्षियों के लिये-चावल, बाजरा। बन्दरों के लिये-भुने हुये चने। चींटियों के लिये - गेहुँ का आटा-भुना हुआ और उसमें मीठा मिला कर । वृक्षों के लिये-स्वच्छ जल। आदि लेकर घर से निकलें और यथा स्थान सबको देकर स्थावर-जंगम सभी प्राणियों की सुख समृद्धि के लिये प्रभु से प्रार्थना करके घर लौटें तब आप भोजनादि करें। यदि किसी कारण नाग (सर्प) न मिले तो जल में दूध को मिला कर वृक्षों को ही सींचें।

द्विपाद का अर्थ बनता है दो पैर वाले मनुष्य आदि और चतुष्पाद का अर्थ बनता है चार पैर वाले गौ आदि पशु। गाय मनुष्य जीवन के लिये अति उपकारी है इसी कारण हाथी के पैर के समान गाय को प्रथम कोटि का माना है। इसका एक और

भी अर्थ है- द्विपाद का अर्थ है दो कर्म, अर्थात् अर्थ और काम। जितने भी जीव जन्तु हैं वह सब द्विपाद हैं। वह भोजन और वंश वृद्धि के अलावा कुछ नहीं जानते और न कुछ कर सकते हैं। इस लिये पशु कीट पतंग आदि सभी को द्विपाद कहा जाता है। चतुष्पाद का अर्थ है चार प्रकार के कर्मों से युक्त अर्थात् धर्म -अर्थ-काम-मोक्ष, यह चतुष्य मनुष्य के लिये है वह धर्म का आचरण करे, धर्म के साथ अर्थ का उपार्जन करे, धर्म-अर्थ के उपयोग को करते हुये 'काम' वंश वृद्धि करे, इसके पश्चात् आवागमन से रहित होने के लिये मोक्ष का साधन करे। इस लिये मनुष्य को चतुष्पाद कहा जाता है।

इस प्रकार पर्व मनाने से परिपूर्ण फल की प्राप्ति होगी।

रक्षा बन्धन

हमारा देश वर्षा बाहुल्य एवं कृषि प्रधान है। आषाढ़ और श्रावण मास में कृषक अधिक व्यस्त रहता है। इन दो मास में आगामी फसल की तैयारी पूरी करके कृषक खाली होकर प्रभु चिन्तन में लग जाता है। इन मासों में सारे वणिक भी अपने-अपने घरों पर आ जाते हैं। सन्यासी महात्मा भी वर्षा के कारण अरण्य और वनस्थली को छोड़कर ग्रामों के निकट आ जाते हैं। 'श्रवण' नक्षत्र के दिन से प्रारम्भ होने से इस मास का नाम 'श्रावंण' रखा गया है। इस मास में सन्यासी-महात्माओं से अथवा स्वयम् वेद का स्वाध्याय, कथा आदि का श्रवण करना मुख्य उद्देश्य होता है। वेद पारायण का उपक्रम प्रारम्भ होता है इस लिये इसको 'श्रावणी उपाकर्म' भी कहते हैं। और जब वेद पारायण समाप्त होता है तो उसे 'उत्सर्जन' कहते हैं। इस प्रकार यह मास वेद पाठ और उपदेश

सुनने के लिये अर्थात् श्रवण करने के लिये ही 'श्रवण' नक्षत्र से श्रावण मास का महत्व बनता है।

श्रावणी पर्व को रक्षाबन्धन के नाम से भी जाना जाता है। वर्षा के कारण सारे युद्ध बन्द हो जाते हैं और राजा लोग अपने मित्र राजाओं से सुरक्षा और राज्य वृद्धि के लिये सन्धियाँ करते हैं। इन सन्धियों का प्रतीक राखी भेजकर किया जाता है।

श्रावणी पर्व पर यज्ञोपवीत जिसे 'जनेऊ' भी कहते हैं। बदलना चाहिये, पुराना यज्ञोपवीत कन्धे से नीचे उतार कर पैरों की ओर से बाहर निकालना चाहिये और नया गले में डाल कर धारण करें। इस अवसर पर नये वेद पाठी बच्चों को तैयार कर उनके उपनयन संस्कार करके यज्ञोपवीत धारण करायें। यज्ञोपवीत में तीन धागे होते हैं, हर धागा भी तीन-तीन तारों का होता है। यह तीन का प्रतीक 'त्रवाचा' तीन वचन तीन संकल्प, तीन उत्तरदायित्व, तीन ऋण, आदि का द्योतक है। पहला - उत्तरदायित्व 'देवऋण', दूसरा - 'ऋषिऋण' तीसरा - 'पितऋण' का है। इन तीन ऋणों से उऋण होने के लिये सदैव जागरूक रहने हेतु ही यह तीन धागे कन्धे पर उत्तरदायित्व को स्मरण कराते रहते हैं।

कठोर कर्मकाण्ड और बन्धनों के भय से बहुत से व्यक्ति यज्ञोपवीत धारण नहीं करना चाहते। जब की यज्ञोपवीत बन्धनों में बाँधता नहीं, मुक्त कराता है। पापकर्म, दुषकर्म, निकृष्टकर्म यह सब बन्धन के कारण होते हैं और जब यज्ञोपवीत पास होता है तो उक्त निकृष्ट कर्म करने से भयभीत होता है, लज्जित होता है, शंकित होता है, तो वह इन अनुचित कर्मों को त्यागकर बन्धन मुक्त होकर निर्भय हो जाता है।

एक व्यक्ति ने प्रश्न किया कि जब हम 'शौच' को जाते हैं। या 'लघुशंका' को जाते हैं। तो हम जनेऊ को कान पर लपेट लेते है, परन्तु जब हम स्त्री के पास जाते हैं तो जनेऊ को कहाँ

रखें। मेरी इस शंका का समाधान नहीं हो पाया। मैंने कहा - क्या आप यह जानते हैं। कि शौच और लघुशंका के समय जनेऊ कान पर क्यों लपेटते हैं? प्रश्न कर्ता ने उत्तर दिया कि हमें यही बताया गया है कि कान की कोई नस है जो जनेऊ लपेटने से दबती है और मलमूत्र खुलकर स्वच्छ हो जाता है। मैंने समाधान करते हुये कहा - यदि यह बात सत्य है तो जो व्यक्ति जनेऊ नहीं धारण करते तो उनका मल-मूत्र भली प्रकार स्वच्छ नहीं होता होगा, क्या यह बात सही है? उत्तर कुछ नहीं मिला। मैंने फिर कहा यह बात गलत है, और वास्तविकता से बहुत दूर। वास्तव में जनेऊ उत्तरदायित्व को न भुलाने का एक प्रतीक है। मल मूत्र त्याग के समय कान पर लपेटने का उद्देश्य केवल एक ही है कि उस समय जनेऊ नाभि से ऊपर हो जाय, और स्त्री सम्पर्क समय उसे गले में लपेट लेना चाहिये। प्रश्न कर्ता ने कहा - कि आज आपने मेरी शंका का सही समाधान किया। वैसे तो इन तीन धगों का मुद्रा मूल्य बहुत कम है, परन्तु कर्मकाण्डी, आस्तिक, वेद पाठ आदि कार्यों को करते रहने का यह एक प्रमाण पत्र भी है। जिस प्रकार बी०ए० / एम०ए० के प्रमाण पत्र का मुद्रा मूल्य नहीं के बराबर होता है, परन्तु इस प्रमाण पत्र के बिना कोई भी अपने आपको बी०ए० / एम०ए० नहीं कह सकता। १- देवऋण- जो हमें सदैव देते ही रहते हैं उनको 'देव' कहते हैं। यज्ञ से देव प्रसन्न होते हैं, इस लिये यज्ञ सदैव करते ही रहना चाहिये। यज्ञ से ३३ कोटि अर्थात् ३३ प्रकार के जो जड़ देवता हैं, जो हमें प्रकाश, वायु, जल आदि सब कुछ देते ही रहते हैं परन्तु उसके अनन्तर कुछ लेते नहीं। इसी कारण यज्ञ करके समस्त देवों को पुष्ट और प्रसन्न करने से देव ऋण से उऋण होना है। २- ऋषिऋण- वेदादि आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय करना, मनन करके तदनुरूप आचरण बनाना और शुद्ध व्यवहार को अंगिकार करने से ऋषि ऋण से

उऋण होते हैं। ३-पितृऋण- माता पिता की सेवा, भोजनादि की समुचित देखभाल रखना कभी कुवचनों का प्रयोग न करना। माता अथवा पिता क्रोधी और क्रूर स्वभाव के भी क्यों न हों तो भी सदैव मान-सम्मान करना और आशीर्वाद प्राप्त करना आदि पितृऋण से उऋण होने का मार्ग है।

पर्व एवं पद्धति

रक्षा बन्धन, श्रावणी का पर्व श्रावण मास की पूर्णमासी के दिन मनाया जाता है। इस पर्व पर घर में अथवा घर के द्वार पर गेरू से कुछ चित्रकारी बनाकर उसे पूजते हैं और बहिनें भाई के हाथ में राखी बाँधती हैं और युवा पतंगें उड़ाकर इस पर्व की इति श्री कर देते हैं। इस पर्व के विषय में पूर्व प्रकाश डाल चुके हैं। इस पर्व के मनाने का क्या सही प्रकार है, उस पर प्रकाश डालते हैं। इस दिन प्रातः काल उठकर स्नानादि से निवृत होकर पहले इस मन्त्र को बोल कर पुराना जनेऊ अर्थत् यज्ञोपवीत उतार कर नया धारण करें।

ओं यज्ञो पवितं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्रयं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवित्रं बलमस्तु तेजः।।
ओं यज्ञो पवितमसि यज्ञस्यत्वा यज्ञोपवीतेनोप! नह्यामि।।

पा० गृ० २/१/११

यज्ञोपवीत! जो अत्यन्त पवित्र है, परमात्मा के शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति कराने वाला प्रेरक है, जो ईश्वर से स्वभाव-सिद्ध उपदिष्ट है, पूर्वकाल से चला आता है, आयु बढ़ाने के लिये विशेष हितकारी है, ऐसे ब्रह्मसूत्र को मैं धारण करता हूँ। यह यज्ञोपवीत बल और तेज के देने वाला है।

हे ब्रह्मसूत्र! तू यज्ञोपवीत है, मैं तुझे यज्ञकर्म के लिये धारण करता हूँ। स्वयम् यज्ञोपवीत से बँधता हूँ, धारण कर रहा हूँ, यह मेरे यज्ञ कार्यों को सिद्ध करने में सहायक हो।

इसके पश्चात् गेरू से मुख्य द्वार पर 'सा हम' अथवा 'सो हम' लिखें। इसका मन्तव्य है कि इस गृह के निवासी वेद पाठी हैं। 'सा हम' का अर्थ है केवल पुरुष ही वेद पाठी है और 'सो हम' का अर्थ है कि इस गृह में स्त्री-पुरूष दोनों ही वेद पाठी हैं। इन शब्दों को द्वार पर लिखने से गृह में रह रहे व्यक्तित्व का चित्रण होता है। तदुपरान्त दैनिक यज्ञ करके निम्न मन्त्रों की विशेष आहुतियाँ दें।

१-ओं ब्रह्मणे स्वाहा। २-ओं छन्दोभ्यः स्वाहा।
३-ओं सवित्र्यै स्वाहा। ४-ओं ब्रह्मणे स्वाहा।
५-ओं श्रद्धायं स्वाहा। ६-ओं मेधाय स्वाहा।
७-ओं प्रज्ञायै स्वाहा। ८-ओं धारणाय स्वाहा।
९-ओं सदसस्पतये स्वाहा। १०-ओं छन्दोभ्य स्वाहा।
११-ओं ऋषिभ्यः स्वाहा।।

इस मास में वेद का पठन-पाठन अवश्य होना चाहिये कम से कम चारों वेदों का प्रथम मन्त्र और अन्तिम मन्त्र का अर्थ सहित पाठ करके यज्ञ में आहुति अवश्य दें।

ओं अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्।।

ऋग्वेद प्रथम मन्त्र

मैं यज्ञ ब्रह्माण्ड सर्ग के सम्पादन और धारण करने वाले, पहल ही समस्त परमाणु, प्रकृति और सृष्टि को धारण करने वाले, प्रति ऋतु अर्थात् प्रत्येक सृष्टि-उत्पत्ति काल में सृष्टि के घटक

पदार्थों को मिलाने हारे, समस्त रमण करने योग्य, पृथिवी आदि लोकों को सर्वोत्तम धारण करने वाले, सब पदार्थों के दाता, द्रष्टा और प्रकाशक,सबसे पूर्व विद्यमान, ज्ञानवान् प्रकाशस्वरूप परमेश्वर की स्तुति करता हूँ।

ओं समानी व आकूतिः समाना हृदयानिवः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।

ऋग्वेद - अन्तिम मन्त्र

आप लोगों का संकल्प, निश्चय भाव और अभिप्राय एक समान रहें। आप लोगों के हृदय एक समान हों। आप लोगों के मन समान हों, जिससे आप लोगों का परस्पर का कार्य सर्वत्र एक साथ अच्छी प्रकार हो सके।

ओं इषे त्वोर्ज्जेत्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रपर्यतु श्रेष्ठतमाय कर्मणऽआप्यायध्वमध्न्याऽइन्द्राय भागं
प्रजावती रनर्मावाऽअयक्ष्मा मा व
स्तेन ऽईशत माघशꣳसो
ध्रवाऽआस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्यपशून् पाहि।

यजुर्वेद प्रथम मन

हे परमेश्वर! अन्न, वृष्टि आदि पदार्थों और पुष्टि-कारक रस के लिये सर्वोपास्य तेरा आश्रय लेते हैं। ये प्राण और प्राणिगण! वायु रूप हैं। उन सबका उत्पादक परमेश्वर सुखों और पदार्थों का प्रदाता है। वह हमें सर्वोत्तम कर्म मोक्ष के लिए प्रेरित करे और अवध्य प्राणगण, यज्ञ योग्य गौएं और पृथिवी आदि लोक परिपुष्ट हों। तुम ऐश्वर्य प्राप्ति के लिये सेवन करने योग्य भग हो। प्रजायें व गौ आदि पशु, प्रजा, एवं वत्स सहित, रोग रहित और राजयक्ष्मा से रहित रहें उन पर डाकू आदि दुष्ट पुरुष

स्वामित्व प्राप्त न करें। पाप की चर्चा करने वाला नीच पुरूष उन पर स्वामी न रहे। वे सब गोपालक और रक्षक के आधीन स्थिररूप से बहुत संख्या में बनी रहें। हे विद्वान् पुरूष तू भी यज्ञ कर्ता के पशुओं की रक्षा कर।

ओं हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्! ओ३म् खं ब्रह्म।।

यजुर्वेद- अन्तिम मन्त्र

हे मनुष्यो! जिस ज्योतिःस्वरुप रक्षक मुझसे अविनाशी यथार्थ कारण के आच्छादित मुख के तुल्य उत्तम अंग का प्रकाश किया जाता, जो वह प्राण व सूर्य मण्ड़ल में पूर्ण परमात्मा है वह परोक्षरूप में आकाश के तुल्य व्यापक सबसे गुण, कर्म, और स्वभाव में सबसे अधिक हूँ सब का रक्षक जो मैं उसका ओ३म् नाम जानो।

ओं अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये।
नि होता सत्सि बर्हिषि।।

सामवेद-प्रथम मन्त्र

हे अग्ने! सर्वत्र प्रकाशक और व्यापक होने और हव्य, दान-योग्य पदार्थों के प्रदान करने के लिये आप हमारे समीप आइये। आपकी सब स्तुति करते हैं। सब पदार्थों के देने वाले आप यज्ञ में विराजमान हों।

ओं स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु।।

सामवेद-अन्तिम मन्त्र

महान यशस्वी और ज्ञानवान् परमेश्वर! हमारा कल्याण करे। सर्वज्ञ, सब पदार्थों का स्वामी, सब संसार का पालक, पोषक

परमात्मा हमारा कल्याण करे, जिसके कालरूप महान् शासन का कोई विनाश नहीं करता, वह सर्वशक्तिमान् परमेश्वर हमारा कल्याण करे, वेद वाणी का स्वामी, पालक परमेश्वर हमारा कल्याण करे।

ओं ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे।।

अथर्ववेद- प्रथम मन्त्र

जो तीन गुना सात अर्थात् इक्कीस पदार्थ समस्त चेतन और अचेतन पदार्थों को धारण करते हुए गति कर रहे हैं। वाणी का पालक उनके बलों को आज, सदा ही मेरे शरीर में धारण करावे।

ओं पनाय्यं तदश्विना कृतं वां वृषभो
दिवो रजसः पृथिव्याः।
सहस्त्रं शंसा उत ये गविष्टौ सर्वाइत्
तां उप याता पिबध्यै।।

अथर्ववेद-अन्तिम मन्त्र

हे विद्वान पुरुषो! तुम दोनों का वह नाना प्रकार का किया हुआ कार्य स्तुति करने योग्य है। द्यौलोक से वर्षण करने वाला सूर्य, अन्तरिक्ष से वर्षण करने वाला मेघ और उसके समान पृथिवी लोक का भी सर्वश्रेष्ठ सुखों का वर्षक, नरपति, और वाणी, पृथिवी और इन्द्रियों के प्राप्ति कार्य में हजारों स्तुतिकर्त्ता ज्ञानप्रद विद्वान् पुरूष हैं, उन सबको पान करने के लिये तथा ज्ञान रस ग्रहण करने के लिये तुम सब लोग प्राप्त होओ।

यज्ञ की पूर्ण आहुति करके यज्ञ स्थलि पर ही बहिनें भाइयों के ललाट पर कुमकुम से तिलक कर अक्षत (चावल) लगा कर सीधे हाथ में राखीबाँधें और इस मन्त्र का अर्थसहित पाठ करें।

ओं पाहि नो अग्ने रक्षसः पाहि धूर्त्ते ररावणः।
पाहि रिषत उत वा जिघांसतो बृहद्भा नो यविष्ठ्य्।।

ऋग्वेद १/३/१०

हे सर्वशत्रुदाहक मेरे भाई! राक्षस हिंसाशील दुष्ट स्वभाव देहधारियों से हमारी पालना करो। कृपण जो धूर्त उस मनुष्य से भी हमारी रक्षा करो। जो हमको मारने अथवा कष्ट देने लगे तथा जो मारने की अथवा कष्ट देने की इच्छा करता है। हे महातेज बलवत्तम भाई! उन सबसे हमारी रक्षा करो।

इस प्रकार पर्व मनाने से पर्व का महत्व और सार्थकता दोनों ही सिद्ध होंगे।

अघोई अष्टमी

प्रत्येक पर्व किसी न किसी उद्देश्य के लिये होता है। अघोई अष्टमी भी उद्देश्य युक्त पर्व है। इसके दो मन्तव्य हैं १- पुत्रवती स्त्रियाँ पुत्र के स्वस्थ, दीर्घायु, सुयोग्य और सम्पन्न होने की कामना से मनाती हैं। २- अपुत्रा स्त्री पुत्र प्राति के लिये मनाती हैं। दोनों ही अवस्थाओं में माता-पुत्र की घनिष्ठता और अटूट सम्बन्ध को बनाये रखने की एक महत्व पूर्ण कड़ी है। यह पर्व अति प्रासंगिक होते हुये भी विकृति के घेरे में फँस कर व्यवहार शून्य होता चला जा रहा है। किसी कवि ने उड़ान भरी और कहा

आपही लीपै, आपही पोतै, आपही काढ़ै, अघोई।
औंधी पड़कर बेटा माँगे, अकल कहाँ की खोई।।

इस प्रकार की अघोई अष्टमी मनाने का दोष केवल नारी पर लगाना उचित नहीं। वह तो अपुत्रा रोग से पीड़ित है। पुत्र की

कामना को लेकर चारों ओर भटकती है। जिसने जो बता दिया वह उसी को सही मान कर करने लगती है। इसमें दोष चिकित्सक का है, बताने वाले का है। मार्ग दर्शक का है। वह उसे क्या बताता है? वह पागलों की भाँति कभी ज्योतिषी पर जाती है, कभी ओझा पर जाती है, कभी स्याने पर जाती है। जो! जो बताता है वह वही करती चली जाती है। यहाँ तक वह पुत्र कामना में अंधी हो जाती है कि किसी ओझा या स्याने ने कहा कि तू किसी के पुत्र के रक्त से स्नान कर। वह यह जघन्य पाप तक कर बैठती है। वह अपने आपको निःपूति होने के कलंक से बचाना चाहती है।

गलत परामर्श, गलत निर्देश बड़ा ही भयंकर होता है। इसके दूरगामी परिणाम अच्छे नहीं होते। बड़े ही कष्ट दाई सिद्ध हो जाते हैं। जो मातायें किसी भी (बकरे आदि के बच्चे की) बलि देकर स्वयम् पुत्र चाहती हैं, वह नितान्त धोखे में हैं। देखो महाभारत की घटना - कुन्ती ने बक्र नामक राक्षस के लिये ब्राह्मणी के पुत्र के स्थान पर अपने पुत्र भीम को भेज दिया था। ब्राह्मणी के एक मात्र नवविवाहित पुत्र की रक्षा की तो प्रभु जी ने कुन्ती के पाँचों पुत्रों को मृत्युंजई बना दिया। वह लाक्षागृह से भी जीवित बचकर निकल आये थे। इसी प्रकार दिव्य दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने भी नर्वदा तट पर मणि अमावस्या की रात्रि में एक ब्राह्मणी के बालक को कालभैरव के मन्दिर में बलि चढ़ने से बचाकर अपने आपको प्रस्तुत कर दिया था। फलस्वरूप गुरुदेव दयानन्द को प्रभु जी ने मृत्युंजय बना दिया। इस पर्व के महत्व को समझिये और सही रूप में मनाइये।

पर्व और पद्धति

अघोई अष्टमी का पर्व कार्तिक कृष्ण अष्टमी को मनाया जाता है। प्रायः इस पर्व को महिलायें दीवार पर अथवा कागज पर कुछ चित्रकारी बनाकर पूजती हैं। यह प्रकार पर्व के मन्तव्य की ओर ले जाने में सक्षम नहीं है। इसके मनाने का सही रूप इस प्रकार से है। बच्चों सहित पुत्रवती महिलायें इस दिन प्रातःकाल उठकर नित्य कृत्य कर्म से निवृत होकर सन्ध्या और दैनिक यज्ञ करके इन मन्त्रों की विशेष आहुतियाँ दें, और अर्थ सहित प्रभु से प्रार्थना करें।

ओं तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। वीर्यमसि वीर्य मयि धेहि।
बलमसि बलं मयि धेहि। ओजोऽस्योजो मयि धेहि।
मन्युरसि मन्यु मयि धेहि। सहोऽसि सहो मसि धेहि।

यजुर्वेद १९/९

प्रभु जी मेरे पुत्र आदि सभी सन्तानें तेजवान हों, वीर्यवान हों, बलवान हों, ओजवान हों, शत्रु को सहन न करने वाली हों, शत्रुओं को पराजित करने में समर्थ हों।

पश्येम शरदः शतम्।।१।।

मेरी सभी सन्तानें सौ वर्ष तक देखतीं रहें।

जीवेम शरदः शतम्।।२।।

मेरे बच्चे सौ वर्ष तक जीवित रहें।

बुध्येम शरदः शतम्।।३।।

सभी बच्चों की बुद्धि सौ वर्ष तक ज्ञानवान बनी रहे।

रोहेम शरदः शतम्।।४।।

समस्त बच्चे सौ वर्ष तक वृद्धि को प्राप्त करें।

पूषेम शरदः शतम्।।५।।

मेरे सभी बच्चे सौ वर्ष तक पुष्ट बने रहे।

भवेम शरदः शतम्।।६।।

मेरे बच्चे सौ वर्ष तक समर्थवान बने रहें।

भूयेम शरदः शतम्।।७।।

बच्चे सौ वर्ष तक सत्तावान बने रहें।

भूयसी शरदः शतात्।।८।।

अर्थववेद १९/६७/१ से ८ तक

मेरे सभी बच्चे सौ वर्ष से भी अधिक वर्षों तक देखें, जीवें, समझें, बढ़ें, पुष्ट हों, समर्थ रहें और सत्तावान बने रहें।

ओं शतमिन्नुशरदो अन्ति देता यत्रा
नश्चक्रा जरसं तनूनाम।
पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो
मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः।।

यजुर्वेद २५/२२

हे प्रभु! आपके समीप जब सौ वर्ष का ही जीवन कम से कम हमारे शरीरों को वृद्धावस्था तक बनावे। मेरे बच्चे सौ वर्षों तक सत्संग करें, वृद्ध हों और जब बुढ़ापे के कष्ट से बचाने वाले पुत्र बच्चों के माता-पिता और पालक हो जायें तब तक आप हमारे बच्चों की आयु को बीच में मत विनष्ट करना।

त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्।
यद् देवेषु त्र्यायुषं तन्नो ऽअस्तु त्र्यायुषम्।।

यजुर्वेद ३/६२

हे देदीप्यमान प्रभु! मेरे बच्चे बाल्य, यौवन, वृद्धावस्था आदि तीनों आयु को प्राप्त करें। ज्ञान के पालक बनकर तीनों अवस्थाओं को प्राप्त करें। और मेरे बच्चे तीनों अवस्थाओं की आयु को प्राप्त करें।

साधु पुत्रम् हिरण्यम्।।

अर्थववेद २०/१२९/५

मेरा तेजस्वी श्रेष्ठ पुत्र हो।

::

पुत्र की कामना करने वाले दम्पत्ति दैनिक यज्ञ के पश्चात् इन मन्त्रों की विशेष आहुतियाँ दें और प्रार्थना करें कि हमको तेजस्वी पुत्र प्राप्त हो

ओं मक्षू कनायाः सख्यं नवग्वा ऋतं वदन्त ऋतयुक्तिमग्मन्।
द्विबर्हसो य उप गोपमा गुरदक्षिणासो अच्युता दुदुक्षन्।।

ऋग्वेद १०/६१/१०

जो विद्वान होकर कन्या का सख्य प्राप्त करते, सत्य वचन बोलते और ऋतुकाल में भोग करते हैं वे अपने वंश के रक्षक पुत्र को प्राप्त करते हैं और अच्युत अमोघ फल प्राप्त करते हैं।

ओं अद्याग्ने अद्य सवितरद्य देवि सरस्वति।
अद्यास्य ब्रह्मणस्पते धनुरिवा तानया पसः।।

अथर्ववेद ४/४/६

हे अग्ने! हे उत्पादक पिता! हे विद्ये! हे परमात्मन्! आज अब इस पुरुष के औषध, सदुपदेश और ब्रह्मचर्य पालन द्वारा प्रजननांग को लक्ष्यभेदक धनुष के समान सामर्थ्य वाला बना दो जिससे यह भी सन्तान प्राप्त करने में समर्थ हो।

पति-पत्नी दोनों करबद्ध हो प्रभु से प्रार्थना करें।

ओं यदेमि प्रस्फुरन्निव द्रतिर्न ध्मातो अद्रिवः।
मृळा सुक्षत्र मृळेम।

ऋग्वेद ७/८९/२

हे शान्तिदायक प्रभो! जब मैं तड़पता हुआ-सा कुप्पे के समान फूला हुआ रोता गाता तेरी शरण आया हूँ, हे सुबल! सुधन! तू मुझे सुखी कर, दया कर पुत्र की कामना पूर्ण कर।

ओं क्रत्वः समह दीनता प्रतीपं जगमा शुचे।
मृळा सुक्षत्र मृळय।।

ऋग्वेद ७/८९/३

हे ऐश्वर्यवान् स्वामिन्! दीन होने के कारण मैं सत् कर्म और सत् ज्ञान के बिलकुल विपरीत चला गया हूँ और बड़ा शोक करता हूँ। हे शुद्ध पवित्र प्रभो। हे उत्तम धन और बलशालिन! तू मुझे सुखी कर, कृपा कर पुत्र की कामना पूर्ण कर।

ओं अपां मध्ये तस्थिवांसं तृष्णाविदज्जरितारम्।
मृळा सुक्षत्र मृळय।।

ऋग्वेद ७/८९/४

हे उत्तम बल ऐश्वर्य के स्वामिन! जलों के बीच में खड़े रोगादि से जीर्ण होते हुए पुरुष को जैसे प्यास सताती है उसी प्रकार हे प्रभो! तेरी स्तुति करने वाले आप्त पुरुषों के बीच या प्राणों से पूर्ण शरीर के बीच रहने वाले मुझको भी भूख प्यास के समान पुत्र की लालसा प्राप्त है। हे प्रभो! हे सबको सुखी करने हारे तू मुझे सुखी कर तेजस्वी पुत्र प्रदान कर प्रभो आपको कोटिशःनमन है।

इस प्रकार पर्व को मनाने से मनोकामना परिपूर्ण होगी।

भाई-दोज

हमारी संस्कृति में सयुंक्त परिवार का बहुत बड़ा महत्व है। सयुंक्त परिवार में माता-पिता, भाई-बहिन आदि सब एक साथ मिलकर ही रहते हैं। विवाह के पश्चात् पृथक घर बसा कर रहना पाश्चात्य सभ्यता की देन है, यही देन हमारे परिवारों को तोड़ती चली आ रही है। जिसका परिणाम यह होता है कि परिस्थिति वश घर को अकेला छोड़ कर जाना ही पड़ता है। इस विवशता का लाभ उठाकर उचक्के लोग घर में घुस कर झाडू लगा जाते है। और वर्षों की खून पसीने की कमाई साफ हो जाती है। सयुंक्त परिवार में घर पर कोई न कोई रहता ही है और उक्त प्रकार का संकट उपस्थित होने की कोई सम्भावना नहीं हो पाती। और विपत्ति के समय पर सबका सहयोग भी प्राप्त हो जाता है। वेद ने सबको एक साथ रहने की आज्ञा दी है, और पारस्परिक व्यवहार को सौहार्द पूर्ण बनाये रखाने का उपदेश किया है। जिससे आपस में भाईचारा प्रेम और सहयोग बना रहे। भाई-दोज का पर्व इसी बात का संकेत देता है। वेद में व्यवहार के बारे में कहा है-

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाध्न्या।।

अथर्ववेद ३/३०/१

मैं प्रभु! तुमको एक हृदयवाला, एक चित्त वाला, परस्पर द्वेष से रहित करता हूँ। जिस प्रकार उत्पन्न हुए बछड़े के प्रति प्रेम से खिंचकर गाय दौड़ी हुई आती है। उस प्रकार एक-दूसरे के पास मिलने के लिये मित्र भाव से खिंचकर चले आओ।

अनुव्रतः पितुः पुत्रो माता भवतु संमनाः।
जाया पत्ये मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवाम्।।

अथर्ववेद ३/३०/२

पुत्र-पिता का आज्ञाकारी हो और माता के साथ अनुकूल और सद्-हृदय वाला होकर रहे और स्त्री अपने पति के लिये सदा मधुर शान्तियुक्त, सुखप्रद कल्याणी वाणी को बोले।

मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसारमुत स्वसा।
सम्यञ्चः सब्रता भूत्वा वांच वदत भद्रया।।

अथर्ववेद ३/३०/३

भाई-भाई से और बहिन से द्वेष न करे, और बहिन अपनी बहिन से और भाई से द्वेष न करे। हे प्रजाजनों! सब एकत्र होकर एक-दूसरे के अनुकूल, एक चित्त और एक ही उद्देश्य में होकर कल्याण और सुखप्रद रीति से एक दूसरे के प्रति वाणी बोला करो।

येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः।
तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृह संज्ञानं पुरुषेभ्यः।।

अथर्ववेद ३/३०/४

जिस वेद ज्ञान को प्राप्त करके देवगण, विद्वान् लोग एक-दूसरे का विरोध नहीं करते और परस्पर भी द्वेष नहीं करते, समस्त पुरुषों को उत्तम ज्ञान प्राप्त कराने वाले अर्थात् वेद विज्ञान के उपदेश, को आप लोगों के घर में करते हैं।

पर्व और पद्धति

यह पर्व कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की दोज को मनाया जाता है। इस दिन प्रातः कालीन नित्य कर्म सन्ध्या यज्ञ आदि से

निबट कर, भारतीय संस्कृति की प्रतीक आदर्श नारी 'बहिन' अपने भाई के घर जाकर अथवा अपने घर बुलाकर अपने हाथ से बनाये गये स्वादिष्ट व्यन्जनों से स्वागत करती है। बहिन को पहले सुन्दर कलात्मक रंग बिरंगा चौक पूरना चाहिये, उस पर उत्तम आसन बिछाकर स्वागत और सम्मान के साथ भाई को बिठलायें, पश्चात् कुंम-कुंम से भाई के विशाल और ऊँचे ललाट पर तिलक लगाकर अक्षत (चावल) लगाये। तिलक करते समय बहिन-भाई के लिये सुख, समृद्धि और दीर्घायु की कामना के साथ वेद के इन मन्त्रों का अर्थ सहित उच्चारण करे।

ओं शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा
नश्चक्रा जरसं तनूनाम्।
पुत्रा सो यत्र पितरो भवन्ति मा नो
मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः।।

यजुर्वेद २५/२२

हे विद्वान् पुरुषो! आप लोगों के समीप जब, सौ वर्ष का ही जीवन कम से कम हमारे भाई की वृद्धावस्था को बनावे, अर्थात् हमारा भाई सौ वर्षों का वृद्ध हो, और जब बुढ़ापे के कष्ट से बचाने वाले पुत्र और शिष्य लोग बच्चों के माता-पिता, और पालक हो जायें तब तक आप गुजरते हुए हमारे भाई की आयु को बीच में मत विनष्ट करना।

त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्।
यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽअस्स्तु त्र्यायुषम्।।

यजुर्वेद ३/६२

देदीप्यमान चक्षुवाले तत्वदर्शी पुरुष को जो बाल्य, यौवन वार्धव्य आदि तीनों अथवा तिगुणी आयु प्राप्त हो और कश्यप

अर्थात् ज्ञान के पालक पुरुष को जो त्रिगुण बाल्य आदि तीनों आयु प्राप्त होती हैं। और जो विद्वान् पुरुषों में त्रिगुण आयु है वह त्रिगुण आयु हमारे भाई को प्राप्त हो। तत्पश्चात्-

ब्रह्मा करोतु दीर्घायु, विष्णुः करोतु सम्पदाम्।
शिवः क़रोतु कन्याण, शुभं भवतु सर्वया।।

बोलकर भाई के ऊपर पुष्प वर्षा करे।

मकर-संक्रान्ति

भारतीय संस्कृति के परिवेश में सूर्य और चन्द्र का समान मूल्यांकन है। सूर्य से ऋतुऐं बनती हैं और चन्द्र से मासों की गणना होती है। जितने समय में पृथ्वी सूर्य की एक परिक्रमा करती है उसे सौर वर्ष कहते हैं। पृथ्वी की गति 'वर्तुलाकार' होती है जिसे 'क्रान्तिवृत' भी कहते है। इस क्रान्तिवृत को १२ भागों में बाँटा गया है। उसके हर भाग को संक्रान्ति कहते हैं। यह गति वर्ष ३६५ दिन ६ घन्टे का होता है। चन्द्रमा पृथ्वी की एक मास में परिक्रमा करता है, इसके दो पक्ष होते हैं एक पक्ष में चन्द्रमा बढ़ता है और दूसरे पक्ष में घटता है। चन्द्र गति का वर्ष ३५५ दिन का होता है। हर तीसरे वर्ष 'मलमास' के नाम से एक मास बढ़ कर तीन वर्ष में चन्द्रमा की ३७ परिक्रमायें हो जाती हैं। हमारे सभी पर्व चन्द्र तिथियों पर ही आधारित होते हैं। पृथ्वी २४ घन्टे में अपनी एक परिक्रमा करती है, इसी से दिन-रात बनते हैं। सूर्य पर्व केवल दो हैं, एक मकर संक्रान्ति, दूसरा वैषाखी मेष संक्रान्ति।

बहुत से व्यक्तियों द्वारा सुना जाता है कि देखो कैसा

हिसाब बना है कि १४ जनवरी को ही मकर संक्रान्ति होती है और वैषाखी १३ अप्रैल की। ऐसा क्यों होता है? इसे किसी ने विचारा? विचारा होगा परन्तु देखने में यही आता है किसी ने नहीं। हाँ! यह अवश्य कह दिया कि कैलैन्डर का हिसाब कितना सही और सच्चा है। जबकि वास्तविकता कुछ और ही है, कैलैन्डर की संस्कृति के पोषकों ने सौर वर्ष की गणना को विज्ञान की हर कसौटी पर शत प्रतिशत सही उतरा पाकर उसका 'मकर संक्रान्ति' और 'मेष संक्रान्ति' को लक्षित कर उससे कैलैन्डर के गणित को सही करने के लिये हर चौथे वर्ष लीप-ईयर के नाम से फरवरी में एक दिन बढ़ाकर सौर वर्ष के समानान्तर ले आते हैं। इस प्रकार कैलैन्डर वर्ष को १४ जनवरी से मकर संक्रान्ति और १३ अप्रैल को मेष संक्रान्ति के साथ जोड़ा है।

मकर संक्रान्ति से ही सूर्य उत्तरायण हो जाता है अर्थात् दिन बढ़ने लगता है और रात्रि घटने लगती है। कर्क संक्रान्ति से सूर्य दक्षिणायन हो जाता है अर्थात् दिन घटने लगता है और रात्रि बढ़ने लगती है।

किसी भी कारण से भूमण्डल से अथवा किसी भू-भाग से कैलैन्डर लोप हो जाय, समाप्त हो जाय तो किस प्रकार यह जाना जा सकता है कि आज अमुक तारीख है? नहीं बताया जा सकता। हम चुनौती के साथ कह सकते हैं कि कोई भी रूप ऐसा नहीं जो तारीख को बता सके। इसके विपरीत यदि संसार से पंचांग लुप्त हो जाय तो हम यह बता सकते हैं कि आज तिथि क्या है, साथ में यह भी बता सकते हैं कि कौन सा पक्ष है। प्रश्न उठता है वह किस प्रकार? हमारा उत्तर स्पष्ट है कि हमारी तिथियाँ कृत्रिम, मानव रचित नहीं, प्राकृतिक हैं। हम चन्द्रमा और सूर्य के मध्य की अंशात्मक दूरी को देखकर तिथि का ठीक आंकलन कर सकते हैं और पक्ष का भी। स्पष्ट है कि चन्द्रमा का उदय शुक्ल

पक्ष में पश्चिम दिशा की ओर से होता है, और पौर्णमासी तक बढ़ता रहता है। अगले ही दिन से चन्द्रमा की कला घटने लगती है और वह पूर्व दिशा से उदित होकर घटना आरम्भ कर देती है, इसी को कृष्ण पक्ष कहते हैं। इस प्रकार हम हर समय पंचांग के अभाव में भी तिथि और पक्ष को जान सकते हैं।

पर्व और पद्धति

मकर संक्रान्ति का पर्व १४ जनवरी को मनाया जाता है, इस पर्व को दान का पर्व भी कहते हैं। इस दिन उर्द की दाल व चावल की खिचड़ी, गुड़ - तिल के व्यंजन बनाकर बाँटते हैं, सबको देते हैं। इस दिन प्रातःकाल के समस्त कार्यों से निबट कर सन्ध्या और दैनिक यज्ञ करें। इस अवसर पर यज्ञ सामग्री में तिलऔर गुड़ को विशेष रूप से मिलाना चाहिये। समस्त दानों में विद्या का दान सर्वोपरि है, इस लिये सत्य विद्या का प्रकाश करने वाले आर्ष ग्रन्थों का दान करें, सबके पास तक पहुँचायें, पढ़ने के लिये प्रेरित करें। सत्यार्थ प्रकाश, वेदामृत सिन्धु, दैनिक पंच महायज्ञ, आर्य्याभिविनय, आर्योद्देश्य रत्नमाला और वेद दर्शन आदि ग्रन्थों का वितरण करें।

इस ऋतु में शीत चरम सीमा पर होता है। रूक्षता बढ़ती जाती है, इसी की निवृति के लिये तिल और गुड़ का सेवन श्रेष्ठकर होता है। तिल स्निग्ध है जो रूक्षता को दूर करता है और गुड़ उष्ण और पाचक है जो शीत से बचाता है।

।।इति।।

लेखक परिचय

नाम - **श्री वीरेन्द्र गुप्तः**

जन्म -३ अगस्त, १९२७ ई॰,
मुरादाबाद

सम्प्रति - व्यवसाय

प्रकाशित कृतियाँ–

१- इच्छानुसार सन्तान, २- लौकिट (उपन्यास),
३- पुत्र प्राप्ति का साधन, ४- पाणि ग्रहण संस्कार विधि,
५- How to beget a son, (अनुवादित) ६- सीमित परिवार,
७-बोध रात्रि, ८- धार्मिक चर्चा, ९- कर्म चर्चा, १०- सस्ती पूजा,
११- वेद में क्या है? १२- गर्भावस्था की उपासना,
१३- वेद की चार शक्तियाँ, १४- कामनाओं की पूर्ति कैसे,
१५- नींव के पत्थर, १६- यज्ञों का महत्व, १७- ज्ञान दीप,
१८- The light of learning (अनुवादित)
१९- दैनिक पंच महायज्ञ, २०- दिव्य दर्शन, २१- दस नियम,
२२- पतन क्यों होता है, २३- विवेक कब जागता है,
२४- ज्ञान कर्म उपासना, २५- वेद दर्शन, २६- वेदांग परिचय,
२७- संस्कार, २८- निराकार साकार के स्वरूप का दिग्दर्शन,
२९- मनुर्भव, ३०- अदीनास्याम, ३१- गायत्री साधन,
३२- नव सम्वत्, ३३- आनुषक (कहानियाँ),
३४- विवेकशील बच्चे, ३५- जन्म दिवस, ३६- करवा चौथ,
३७-योग परिणति, ३८- पर्वमाला

सुलेखः भूषण कम्प्यूटर मन्दिर, राजोगली, मुरादाबाद
दूरभाष : ३२६१९७